ISSN : 2347-7660 (Print) | ISSN : 2454-1818 (Online)

साहित्य में किन्नर विमर्श की आवश्यकता

डॉ. आर.पी. वर्मा
एसो. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

हमारा सम्पूर्ण समाज दो स्तम्भों पर टिका हुआ है, 'पुरूष एवं स्त्री'। सामान्यतः दोनों का कार्य आपसी सहयोग से वंश परम्परा एवं मानव जाति को आग्र बढ़ाना है। हमारे समाज में इन दो लिंगों के अतिरिक्त एक अन्य लिंग का भी अस्तित्व है, जो न तो स्त्री वर्ग में आता है, और न ही पुरूष वर्ग में और न तो यह सम्बन्ध बना सकता है, न ही गर्भ धारण कर सकता है। इसी वर्ग में उन व्यक्तियों को भी समाहित किया जा सकता है, जिनका जन्म तो पुरूष जननांग के साथ हुआ है, किन्तु वह स्वयं को पुरूषों की श्रेणी में असहज पाता है और स्त्री प्रवृत्तियों का भी अनुपालन करता है। सभ्य समाज में जहां इनके लिए 'किन्नर' शब्द प्रयुक्त होता है, वहीं जनसामान्य में इन्हें 'हिजड़ा', 'नपुंसक', 'खोजा', 'छक्का' इत्यादि से सम्बोधित किया जाता है।

यह तो सर्वविदित है कि साहित्य किसी भी समस्या को उजागर करने का सबसे सशक्त माध्यम है। साहित्य के माध्यम से ही वर्तमान में इतने विमर्शों तथा 'दलित विमर्श', 'आदिवासी विमर्श', 'स्त्री विमर्श' इत्यादि को बल मिला है। इन विमर्शों के माध्यम से ही उन पक्षों पर विस्तार से चर्चा सम्भव हो पायी है, जो कभी मुख्य विषय नहीं बन पाते, किन्तु समाज में अभी भी एक वर्ग शेष है, जो समाज की मुख्यधारा से विलग हाशिए पर है, वह है 'किन्नर समाज'। अब हमें साहित्य में एक नये विमर्श के रूप में 'किन्नर विमर्श' की आवश्यकता है।

किन्नरों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। समाज में किन्नरों को अत्यन्त नकारात्मक एवं हेय दृष्टि से देखा जाता है। लोग इन्हें देखकर इनसे घृणा करते हैं। जन सामान्य वर्ग इनसे सामाजिक सम्पर्क रखना पसन्द नहीं करता है। उच्चतम न्यायालय द्वारा भी इन्हें तीसरे लिंग के रूप में मान्यता प्रदान कर दी गयी है, साथ ही सभी आवेदनों में तीसने लिंग के रूप में प्रतिभाग की अनिवार्यता तथा सामान्य मनुष्य की भांति अन्य अधिकार भी प्रदान किये गये हैं। इसके पश्चात भी वर्तमान समय में इन्हें पूर्णरूप से सामाजिक स्वीकृति नहीं मिल पायी है। समाज द्वारा किये गये इस प्रकार के दुर्व्यवहार से व्यथित होकर 'किन्नर कथा' उपन्यास की मुख्य पात्र 'तारा' अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति करते हुए कहती है–

'भगवान ने मेरे साथ ऐसा अन्याय क्यों किया? मैं हिजड़ा हूं तो इसमें मेरा क्या कसूर? मुझ निर्दोष को किस बात की सजा मिल रही है? मेरा अपना कौन है? घर–बार, मां–बाप, भाई–बहन, बच्चे कोई नहीं है मेरा, जिसे मैं अपना कह सकूं, सब कुछ होते हुए भी कोई मुझसे रिश्ता नहीं रखना चाहता, कोई मुझे अपनाने को तैयार नहीं है। बचपन से आज तक बस अपने आपमें ही दर्द पीते हैं। दूसरों को हंसाते आये हैं, उनकी खुशियों में शरीक होते आए हैं, आशीष के सिवा कभी किसी को कुछ नहीं दिया, ईश्वर से बस एक शिकायत है। आखिर क्यूं उसने हमें ऐसा बनाया? क्यों हिजड़ा होने का दंड दिया? काश! हम भी औरों की तरह

स्त्री या पुरूष होते, हिजड़ा होना कितनी बड़ी सजा है, यह कोई हिजड़ा ही समझ सकता है, दूसरा कोई नहीं, कभी नहीं।'

इन पंक्तियों में किन्नर होने की असीम पीड़ा परिलक्षित होती है। एक किन्नर होना अर्थात् समस्त रिश्तों का समाप्त हो जाना।

भारतीय समाज में किन्नरों के साथ धार्मिक एवं व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से भिन्न–भिन्न व्यवहार किया जाता है। एक ओर तो धार्मिक दृष्टि से इन्हें उच्च व पवित्र स्थान प्रदान किया जाता है, वहीं दूसरी ओर व्यावहारिक दृष्टि से इनके साथ अत्यंत हेय व्यवहार किया जाता है। भारतीय समाज में किन्नरों को हाशिए पर रखा गया है। किन्नर समुदाय समाज में केवल मुख्यधारा से ही विलग नहीं किया गया, अपितु समाज में इनके प्रति अनेक गलत धारणाओं को भी लोगों में भरा गया, जिसके कारण लोगों की भावनाएं इनके प्रति नकात्मक हो गयी हैं। परिणामतः प्रयत्न करने के पश्चात भी वे मुख्यधारा में नहीं आ पाते हैं तथा समाज के मध्य रहकर भी अलगावपूर्ण जीवन जीने को मजबूर रहते हैं।

'स्त्री काल' में प्रकाशित 'डिसेन्ट साहू' द्वारा लिए गए साक्षात्कार में छत्तीसगढ़ की 'रवीना बरिहा' कहती हैं, 'थर्ड जेंडर' के प्रति हम लोग समाज की मिली–जुली प्रतिक्रिया देखते हैं। समाज के जिन लोगों का थर्ड जेंडर किन्नरों के साथ पहले कभी अथवा लगातार मेलजोल रहा है, वे बहुत जल्दी हम लोगों को स्वीकार करते हैं। हमसे अच्छा व्यवहार करते हैं। कई बार हम लोगों को एक दैवीय रूप में देखा जाता है, लेकिन समाज का एक बड़ा तबका ऐसा है, जो अपने कुछ पूर्वग्रहों के कारण हमसे दूर भागता है। शायद थर्ड जेंडर का समाज में पर्याप्त मेल–जोल न होने से वे एक झिझक के कारण हमें कबूल नहीं करते। इस प्रकार समाज में हम लोग दो भिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएं देखते हैं, एक बहुत सकारात्मक तो दूसरी अत्यन्त नकारात्मक।

एक किन्नर की केवल यही इच्छा होती है उसे भी सामान्य मनुष्य की भांति जीवन जीने का अधिकार हो। उसके साथ अछूतों जैसा व्यवहार न किया जाए। उसे भी परिवार तथा समाज का सहयोग मिले, किन्तु उसकी यह इच्छा पूर्ण नहीं हो पाती है। इनको सर्वाधिक आशा अपने परिवारजनों से होती है कि वे उन्हें स्वीकार करेंगे, प्रेम देंगे, किन्तु सामान्यतः ऐसा नहीं होता है। किन्नरों का तिरस्कार सर्वप्रथम परिवार से ही प्रारम्भ होता है, जिसके कारण ये पूर्ण रूप से शापित एवं अभिशप्त जीवन जीने को मजबूर रहते हैं। इसके सम्बन्ध में प्रसिद्ध कथाकार 'महेन्द्र भीष्म' लिखते हैं, प्रत्येक हिजड़ा अभिशप्त है, अपने परिवार से बिछुड़ने के दंश से, समाज का पहला घात से उस पर शुरू होता है। अपने ही परिवार से, अपने ही लोगों द्वारा उसे अपनों से दूर किया जाता है। परिवार से विस्थापन का दंश सर्वप्रथम उन्हें ही भुगतान होता है।

कोई भी शिशु किन्नर कहलाने से पहले अपने माता–पिता की सन्तान होता है, किन्तु माता–पिता उसे किन्नर होने के कारण त्याग देते हैं। इनके माता–पिता के सम्बन्ध में एक कटु सत्य यह भी है कि सन्तान यदि शारीरिक, मानसिक रूप से अपाहिज है तो वह उन्हें स्वीकार्य है, किन्तु यदि सन्तान पूर्ण स्वस्थ हो, किन्तु यदि सन्तान पूर्ण स्वस्थ हो, केवल उसमें यौनिक कमी हो तो वह उन्हें स्वीकार्य नहीं है। वे अपनी झूठी शानो–शौकत, खानदान की इज्जत मर्यादा, साख तथा सामाजिक परिस्थितियों के समक्ष अपनी संतान को त्याग देते हैं और उन्हें हिजड़ों को सौंप देते हैं। इस प्रकार एक मासूम, जिसे पता भी नहीं होता कि उसका दोष क्या है, खानदान, कुल, वंश, इज्जत आदि के नाम पर बलि चढ़ा दिया जाता है।

इस प्रकार की परिस्थितियों की अभिव्यक्ति महेन्द्र भीष्म के उपन्यास 'किन्नर कथा' में बखूबी हुई है। उपन्यास की मुख्य पात्र सोना एक किन्नर होने के कारण अपने पिता द्वारा घृणा का पात्र बनती है। जब तक उन्हें उसकी सच्चाई का पता नहीं होता, तब तक वह उनकी आंखों का तारा होती है, किन्तु जैसे ही उनके नेत्रों के समक्ष वास्तविकता आती है तो वह उन्हें किरकिरी की भांति नेत्रों में चुभने लगती है। वे उससे इतनी नफरत करते हैं कि उसकी हत्या कराने का आदेश तक दे देते हैं। उन्हें अपनी पुत्री ही खादनाद पर धब्बा लगने लगती है। जगतराज अपनी पुत्री सोना के सम्बन्ध में कहता है–

'हे भगवान! हमारी सन्तान हिजड़ा! वीर बुंदेला खानदान में हिजड़ा ने जन्म लिया, भगवान हां हमााए संगे इत्तो बड़ो अन्याय नहीं करो चाहिए तो हे! कामदगिरि महाराज कौन पाप की सजा दई तुमने, बुंदेला खानदान को नाम डुबो दें, क्षत्री वंश में हिजड़ा का, ऊ हिजड़ा पाले पोसे अरे आज नहीं तो कल, जब सबके सामने जा बात आ जेहे कि हमाई सन्तान हिजड़ा है, बुंदेला खून हिजड़ा पैदा करत तो गत हुई हमाई, ई कलंक सोना हां भुन्सारे, मो अंधियारे इन्दौर की डांग ले जाके मार डरो। कोऊ हां कानोकान पतो न परो चाहिए।'

कुछ इसी की परिस्थितियां चित्रा मुद्गल कृत 'पोस्ट बॉक्स नं. 203–नाला सोपारा' में भी देखने को मिलती हैं। विनोद एक किन्नर है। वह अपनी बा को प्रणों से प्यारा है, किन्तु वह अपने परिवार को छोड़कर किन्नरों के बीच रहने के लिए मजबूर है, परिवार के अन्य सदस्य तथा समाज ने ये दूरियां बना दी हैं। विनोद पत्र में अपने अन्तर्गत की पीड़ा को अभिव्यक्त करते हुए बा को लिखता है, मेरी सुरक्षा के लिए कानुनी कार्यवाही कें नहीं की तूने, मेरी बा, तूने ओश्र पप्पा ने मिलकर मुझें कसाइयों के हाथ मासूम बकरी सा सौंप दिया, जिस नरक में तूने और पप्पा ने धकेला है मुझे, वह एक अन्धा कुआं है, जिसमें सिर्फ सापं–बिच्छू रहते हैं। सापं–बिच्छू बनकर पैदा नहीं हुए होंगे। बस, इस कुएं ने उन्हें आदमी नहीं रहने दिया।'

एक ओर जहां इन उपन्यासों में परिवार द्वारा तिरस्कार दिखाया गया है, वहीं दूसरी ओर यह भी दिखाया गया कि जो परिवार इन्हें प्रेम करते हैं, अपने पास रखना चाहते हैं, उन्हें समाज मजबूर कर देता है कि वे अपने बच्चे को त्याग दें।

'प्रदीप सौरभ' कृत 'तासरी ताली' उपन्यास में आनंदी आटीं की पुत्री निकिता एक ऐसा ही उदाहरण है। आनंदी आटीं समाज की परवाह न करते हुए अपनी पुत्री को पढ़ाना चाहती है। वे इसके लिए हर सम्भव प्रयास करती हैं, किन्तु प्रत्येक स्थान पर निराशा ही हाथ लगती है, फिर चाहे वह लड़कों का स्कूल हो अथवा लड़कियों का। दोनों जगह से एक ही जवाब मिलता है कि जेंडर स्पष्ट न होने के कारण दाखिला नहीं मिल सकता। उनका कहना था स्कूल केवल सामान्य बच्चों के लिए है, बीच के बच्चे का दाखिला करने से स्कूल का माहौल खराब हो जाएगा। इस सन्दर्भ से स्पष्ट होता है कि यदि परिवार इन्हें स्वीकार करता है। सामान्य बच्चों की पालन–पोषण करना चाहता है, तो इसमें समाज बाधा बन जाता है।

'यमदीप' उपन्यास में भी यही सवाल 'नीरजा माधव' नाज बीबी के माध्यम से उठाने का प्रयत्न करती हैं। नंदरानी के अभिभावक को प्रेम करते हैं। नंदरानी की माता उसे पढ़ा–लिखाकर आत्मनिर्भर बनाना चाहती थी, किन्तु वही सवाल महताब गुरु उठाने हैं कि कभी हिजड़े को पढ़ते–लिखते देखा है या पुलिस में, कलेक्टरी में अथवा मास्टरी में कहीं इन्हें देखा है? वे कहते हैं इनकी दुनिया बस यही है। उनके अनुसार–इन तृतीय लिंगी के समर्थन हेतु कोई आगे बढ़कर

नहीं आएगा कि हिजड़ों को पढ़ाओ–लिखाओं और नौकरी दो। महताब गुरु के माध्यम से लेखिका ने समाज द्वारा इनके प्रति अपनाये गये तिरस्कृत व्यवहार को दिखाने का प्रयत्न किया है।

उल्लेखनीय उपन्यासों में विभिन्न तथ्यों के माध्यम से किन्नरों से सम्बन्धित अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को उठाया गया है। जैसे प्रशासन का इनके प्रति व्यवहार, समाज का इनके प्रति दृष्टिकोण, किन्नर समाज के प्रति अन्धविश्वास, रोजगार की समस्या, शिक्षा सम्बन्धी समस्या इत्यादि।

जिस तरह साहित्यकारों ने अन्य उपेक्षित वर्गों से सम्बद्ध विमर्शों पर लेखनी चलाने में उत्सुकता दिखायी है, वैसी किन्नर विमर्श पर नहीं। किन्नरों पर पहले भी लिखा गया है, किन्तु वह उल्लेख मात्र अथवा गौण रुप में है। साहित्य के क्षेत्र में अन्य विषयों की तुलना में किन्नर समाज पर बहुत कम बात हुई है, आवश्यकता है कि उनको मुख्य विषय बनाकर लिखा जाए। तभी वह वर्ग भी मुख्यधारा में आ सकेगा। हो सकता है, साहित्य के माध्यम से हीसही समाज की दृष्टि इनके प्रति परिवर्तित हो जाए।

किन्नर विमर्श हिन्दी साहित्य में अभी परिपक्व अवस्था में है। लोगों की मानसिकता अभी इन्हें स्वीकारने में हिचकिचा रही है। फिर भी कुछ साहित्यकार किन्नर विमर्श को लेकर सजग हुए हैं और इस विमर्श को आगे बढ़ाने में निरन्तर अपना योगदान दे रहे हैं। जिनमें 'महेन्द्र भीष्म', 'प्रदीप सौरभ', 'चित्रा मुद्गल', 'निर्मला भुराड़िया' आदि नाम उल्लेखनीय हैं। इन समकालीन साहित्यकारों ने किन्नरों के जीवन की ओर गम्भीरता से ध्यान दिया तथा इन्हें मुख्य विषय बनाकर कई उपन्यास लिखे, जिनमें 'किन्नर कथा', 'मैं पायल', 'तीसरी ताली', 'पोस्ट बाक्स नं. 203–नाला सोपारा', 'गुलाल मंडी' और 'यमदीप' इत्यादि प्रमुख हैं। इन सभी उपन्यासों के माध्यम से किन्नरों को मुख्यधारा में जोड़ने का अथक प्रयास किया गया है। ये सभी उपन्यास किन्नर जीवन के परिदृश्यों को बखूबी सामने रखते हैं। किन्नर समाज पर आधारित ये प्रतिनिधि उपन्यास स्पष्ट करते हैं कि किन्नर समाज किस तरह समाज का महत्त्वपूर्ण अंग है। उन्हे भी समाज में उनका हक व सम्मानजनक स्थान मिलना चाहिए, जो एक पुरुष अथवा स्त्री को मिलना है। किन्नर समुदाय के बारे में पौराणिक आख्यानों, रामायण, महाभारत, अर्थशास्त्र, कामसूत्र एंव उसके बाद मुगल इतिहास में भी बहुत–सी घठनाएं मौजूद हैं। ऐतिहासिक एंव पौराणिक आख्यानों में भी इनकी उपस्थिति विशेष रुप से मिलती है।

सामाजिक धारणाओं व पौराणिक कथाओं से भिन्न साहित्य में इनकी एक अलग छवि गढ़ी गयी है। इस छवि की पड़ताल अनेक सन्दर्भों से करने की आवश्यकता है, साथ ही साहित्य की अन्तर्दृष्टि तृतीय लिंगी समाज को कैसे देखते है, यह समझना भी आवश्यक है।

उल्लिखित सभी उपन्यास समाज की किन्नरों के प्रति सोच बदलने का ऐक अच्छा प्रयास हैं। लोगों का किन्नरों के प्रति जो व्यवहार है, उनके प्रति सोच है, निश्चय ही इन उपन्यासों को पढ़ने के पश्चात उनमें परिवर्तन होगा, किन्तु अभी भी साहित्य में किन्नर समाज की समस्त समस्याओं और पीड़ाओं को विभिन्न पक्षों एवं दृष्टियों से विश्लेषित करने की आवश्यकता है। साहित्य के माध्यम से इस उपेक्षित वर्ग की आवाज जन–जन तक पहुंच सकती है और साहित्य ही किन्नर विमर्श को आगे बढ़ाने में मील का पत्थर साबित हो सकता है। वर्तमान समय में सबसे बड़ी आवश्यकता यह भी है कि मुख्यधारा का समाज किन्नर समाज के प्रति अपनी धारणा बदले एवं इनके प्रति मन–मस्तिष्क में स्थापित पूर्वग्रहों को दूर करने का प्रयास करे। यह वर्ग समाज में केवल नाच–गाकर हमारा मनोरंजन करने के लिए पैदा नहीं हुआ है, इन्हें भी हक है कि ये गरिमा से परिपूर्ण जीवनयापन करें। अतः

इस विषय पर और अधिक कार्य किये जाने की आवश्यकता है तथा अन्य विमर्शों की भांति किन्नर विमर्श को भी एक आन्दोलनरुपी प्रगति की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

- महेन्द्र भीष्म, किन्नर–कथा, सामयिक प्रकाशन, 2016, पृ. 64
- स्त्रीकाल.बवउ
- महेन्द्र भीष्म, किन्नर–कथा, सामयिक प्रकाशन, पृ. 41–42
- महेन्द्र भीष्म, किन्नर–कथा, सामयिक प्रकाशन, पृ. 24–26
- चित्रा मुद्गल, पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, पृ. 11
- किन्नर समाज की चुनौतियाँ–रजनीप्रताप
- साहित्य में किन्नर विमर्श की आवश्यकता कीर्तिमालिक